पुष्पा

अपनी बड़ी बहन के साथ जूठन इकट्ठा करने वाली छोटी व सॉवली सी लड़की पुष्पा अब थोड़ी बड़ी हो चली थी और अपनी मॉ के साथ एक दो घरों मे बर्त्तन मॉजने और झाड़ू बुहारू करने जाने लगी थी।उसके पास बस एक ही फ्रॉक थी.जो शायद कभीं पीले रंग की बड़ी बड़ी छापों वाली रही होगी .पर अब वो काली चिपचिपी चिथड़ी मात्र थी.जिसमे अनगिनत छेदें थीं।फ्रॉक मे एक छेद ठीक उसके दॉये छाती के नीचे था.जहॉ से उसकी जवान होती जवानी झॉकती रहती थी।पता नही कितनी बार मैने उसकी ये बाहर झॉकती जवानी देखी.जहॉ एक बड़ा सा काला तिल था.जिसे देखते ही मै अक्सर उसके पूरे देह का अनुमान लगाने बैठ जाता थाःये ऐसा होगा तो वो वैसा होगा।एक तिल यहॉ होगा तो एक मासा वहॉ होगा।
झारखन्ड प्रान्त मे धनबाद नाम का एक जिला है.जंगलों पहाड़ो व कोयले की खदानो से भरा।यहॉ के मूल निवासी आदिवासी हैं.जो बंगाली से मिलती जुलती एक भाषा बोलते हैं।इस भाषा का नाम खोट्टा है।इन आदिवासियों मे दो वर्ग है.एक शहर से जुड़ा.दूसरा शहर से कटा।पहले वर्ग के लोग ज्यादेतर कोयले की खदानो मे मलकट्टे हैं या फिर रिक्शा टानते हैं।भीख भी मॉगते हैं।इनकी औरतें या तो छोटे मोटे ठीकेदारों के यहॉ ईटें गेरें ढोने का काम करती हैं या फिर लोंगो के घरों मे झाड़ू बुहारू का।दूसरा वर्ग सिर्फ शहर के हाटों मे अपनी उगाई सब्जियॉ बेचने आता है.जिनमे अधिकांशतः औरतें ही होती हैं।मर्द महुए या मॉड़ की शराब पीकर मोटे मोटे चूहे या पेड़ो के बगूले पकड़ते धरते रहते हैं।इनके इलाकों मे पुलिस सिपाही भी इस डर से नही जाते थे कि कहीं ये जंगली उन्हे भी बगूला या चूहा समझ कर अलाव पर भून न बैठें।इनकी औरतो मे ब्लाउज या चोली पहनने का रिवाज ही नही हैं।इनकी छातियॉ खुली ही रहती हैं।सिर पर सब्जी की टोकरी धरे अपनी छातियॉ उछलाती कूदाती ये हर दिन ही धईया गेट से होकर गुजरती थीं.जहॉ हमारी पुरानी शैली मे बनी लाल ईटो की सरकारी कोठी थी।इसका अहाता पुटुस की झाड़ो से बॅधा ढॅका था।हर दिन मै सुबह सबकी नजर बचाकर पुटुस की झाड़ के पीछे से काम या हाट पर जाने वाली आदिवासी औरतों को देखता था।ये एक तरह से मेरा दैनिक क्रम बन चला था।उम्र के साथ दूसरी छातियॉ तो मेरी स्मृतियों मे धूमिल पड़ती चली गई.पर पुष्पा.उसकी फ्राक.फ्राक के छेद.उसकी कसी कमर.फ्राक के नीचे उसकी झॉकती सॉवली पिन्डलियॉ इन तमाम वर्षो के बाद आज के दिन भी मुझे और मेरी स्मृतियों को डटकर आलोड़ित करती है।
उसका बाप डिगवाडीह मे चौकीदार था।खाकी कोट व पैंट मे पान गुलगुलाते चुभलाते धईया गेट से शहर जाते वो रोज ही दिखता था।चलते वक्त वो अपना दॉया पॉव थोड़ा झटककर सड़क पर रखता था।जो भी उसकी आमदनी रही हो.अपने परिवार को सम्हाले हुए था और एक हद तक समान्य और इज्जत की जिन्दगी बसर कर रहा था।दुर्गा पूजा के अवसर पर वो अपनी पत्नी और पॉच बच्चों के साथ तनकर आगे आगे अपना पॉव झटकते पुलिस लाईन हीरापुर यहॉ तक कि धनसार रोड तक घूम आता था।सब नए कपड़ों मे ही दिखते थे।
अचानक उसकी नौकरी न रही।उससे चौकीदारी छीन ली गई।इस सम्मानित परिवार पर कहर की ये पहली चाबुक थी।
धनबाद मे एक इन्जीनियरिंग कॉलेज है.जो समय के साथ एक स्व संचालित स्वायत विश्वविद्यालय मे विकसित हुआ।इसका एक गरिमामय नाम था।इसकी बुनियाद अन्ग्रेजो ने डाली थी और इंगलैंड के रायल स्कूल ऑफ माईन्स के समानान्तर इसका नाम इन्डियन स्कूल ऑफ माईन्स रखा था।यहॉ पूरे देश के चुनिन्दे छात्र ही आते थे।मेरे पिताजी इसी विद्यालय मे कार्यरत थे।इस विद्यालय का बड़ा सा अहाता धनबाद का सबसे साफ सूथरा और हरा भरा इलाका था।कैम्पस मे एक मिश्रित आबादी थी।बिहार बंगाल पंजाब यू पी मद्रास व अन्य प्रान्तों के लोग बिना किसी भेद भाव के बड़े प्रेम से रहते थे।इस विद्यालय का अहाता तीन गेटों के बीच बॅधा या फैला हुआ था.जिनके अपने नाम भी थेःमेनगेट.रजिस्ट्रार साहब वाला गेट और धईया गेट।धईया गेट के ही समीप हमारी सरकारी कोठी थी।इस विद्यालय मे कई निदेशक आए और गए पर यहॉ का जीवन.यहॉ की मौलिकता .यहॉ का प्रेम भाव.यहॉ का चहल पहल सबकुछ पूर्ववत ही रहा।दुर्भाग्य से इस विद्यालय मे एक नया निदेशक आया.जो पंजाब का रहने वाला था.और इस विद्यालय का छात्र भी रह चुका था।
पहले इस विद्यालय मे स्नातक छात्र आते थे।अब यहॉ हायर सेकेन्ड्री पास अपरिपक्व व उदण्ड छात्र आने लग पड़े।नए नए कोर्स आए.नई नई बहालियॉ हुई दबाकर छात्रावास ऑफिसें व बिल्डिंगे बनी।ठीके पंजाबी ठीकेदारों को मिले।इस निदेशक के कार्यकाल मे विद्यालय मे चापलूसी के नाम पर प्रान्तीयता आई.भेदभाव आया.जातियता आई और वर्षो से बने प्रेम भाव मे कलह का ऐसा बीज पड़ा.जो बिना सींचे ही जंगली पुटुस की तरह पूरे कैम्पस मे फैल बिखर गया।इस विद्यालय का नाम बदल दिया गया।इसका नया नाम इन्डियन इन्सच्यूट ऑफ मिनरल साइन्सेस रखा गया.जिसका हिन्दी अनुवाद धईया के तथाकथित हिन्दी भाषा के जानकार.जो इसी विद्यालय मे क्लर्क थे.रामनाथ पाठक ने किया. .भारतीय खनि विद्यापीठ।पुराने लकड़ी के शानदार फाटकों की जगह पर नए आधुनिक लोहे के गेट लगे।लाल ईटों से बनी पुरानी शैली मे बनी इमारतों के सामने बिना सोचे विचारे पंजाबी ठीकेदारों ने नई नई आधुनिक बिल्डिन्गे खड़ी कर दीं.जिनमे कुछ महीनों के बाद ही दरारें पड़नी शुरू हो गई।इनके पलस्तर तो एक बरसात तक न झेल पाए।केन्द्रीय सरकार ने दबा कर पैसा बहाया.जो छोटी बड़ी नहरो से न जाने किन किन खेतों मे बहा!इस निदेशक ने अपने कार्य काल मे इस विद्यालय की मौलिकता का डटकर बलात्कार किया।
पूरे धनबाद की आबादी भी कुछ मिश्रित सी ही है।समाज का एक वर्ग बहुत ही धनी है।इस वर्ग मे गुजराती पारसी तथा मारवाड़ी आते हैं जिनके हॉथों मे छोटा बड़ा हर तरह का व्यवसाय है।हिन्दुस्तान मे यहूदियों के नाम पर इन्हे ही याद किया जाता है।ये सत्य है कि व्यवसाय का अ से अः इन्ही के वश का है भी।बाकी दूसरे लोग व्यवसाय के नाम पर महज सफारी सूट सिलवाने और शराब पीने के अलावे और कुछ नही जानतें।
यू पी के लोग मध्यमवर्गीय हैं.परन्तु साथ साथ अच्छे ओहदों पर हैं।दक्षिण भारत के सीधे साधे लोग अध्ययन अध्यापन मे व्यस्त हैं।बंगाली ज्यादेतर क्लर्क हैं।बिहारी या तो चौकीदारी.नही तो रंगदारी करते हैं।बिहार बंगाल और यू पी के लोग नौकरियों मे रहते हुए भी इधर उधर ऑफिसों के सामने सरकारी जमीनो पर गुमटी डालकर चाय पान का धन्धा फैलाए बैठे हैं।मनोरंजन के नाम पर धनबाद मे पॉच पिक्चर हॉल्स हैं।शिक्षा के नाम पर कई सरकारी आर्यसमाजी मिशनरी व निजी स्कूल्स और कॉलेजेज हैं।यातायात के मूख्य साधन बसें टैक्सी टेम्पो व रिक्से हैं।धनबाद का रेलवे स्टेशन भी काफी बड़ा है।यहॉ बसो टैक्सियों और टेम्पो के मेन स्टैन्डस हैं।स्टेशन के सामने रिक्सेवाले या जूता पालिश करने वाले कोहरे की तरह फैले रहते हैं।रॉची.हाजारीबाग.पलामू.सिंहभूम. के बीच या उनसे सटा बिहार के छोटानागपुर कमिश्नरी का धनबाद किसी भी तरह से बिछड़ा या बिसरा शहर

नही कहा जा सकता है।धनबाद से जुड़े कई नाम झरिया. बोकारो. डिगवाडीह. सुदामडीह. केन्दूआ करकेन्द कम से कम भारतीयों के लिए अन्जान नही है।

धनबाद स्टेशन से एक पक्की सड़क हमारे घर के पीछे से बेकारबॉध. रानीबॉध. फ्लावरमील. बरवडा. मेमको होते हुए पता नहीं कहॉ तक जाती थी!धईया गेट से एक टूटी फूटी सड़क रानीबॉध तक जाती थी।रानीबॉध मे झरिया के राजा का एक ढहा महल था. जिसके बगल मे एक बसाती और बर्षाती तालाब थी।इस तालाब मे आस पास के धोबी कपड़े लत्ते धोते थे।इसी तालाब मे प्रतिवर्ष विहार का एक प्रसिद्ध पर्व छठ हजारों की संख्या मे मनाया जाता था।सूर्य को तर्पण देने यहॉ झरिया के राजा भी आते थे।धईया गेट से रानीबॉध तक सड़क के दॉये वॉये कई चाय पकौड़े गल्ले व मिठाइयों की दुकाने और गुमटियॉ थीं।इसी सड़क पर झरिया के राजा का एक सोया हुआ राममंदिर था. जिसकी रखवाली एक पुरोहित करते थे. जिन्हे लोग बुढऊ पंडित कहते थे।इस मंदिर के ठीक सामने धईया के मुखिया परमानिक का एक पक्का मकान था।उसके पास न सिर्फ काफी जमीने थी. वरन चीनी और किरासन तेल के कोटे भी उसके हॉथ मे थे।उसी के अहाते से लगा उसी की जमीन पर एक कच्चा मिट्टी का मकान था. जो डिगवाडिह के चौकीदार का था।ये उसका निजी मकान था या परमानिक की दयादृष्टि थी. ये किसी को मालूम न था।वाद के दिनो मे मुझे पता चला कि पुष्पा की मॉ परमानिक की जरखरीद रखैल थी।घर के खाने पीने के खर्चे का एक बड़ा सा भाग परमानिक ही उठाता था।पुष्पा की मॉ अपने मॉग मे उस चौकीदार के नाम सिन्दूर डालती थी. पर उस परमानिक को ही अपनी सारी सेवायें देती थी।उसके पॉचों बच्चे उसे परमानिक से ही मिले थे।

अब ये कहॉ तक सत्य था. इसे ईश्वर ही जानें।जो सत्य था. वो ये था कि पुष्पा की मॉ और उसके चौकीदार पति मे नही भी तो बीस वर्ष का अन्तर तो रहा ही होगा।दूसराः परमानिक की पत्नी आरम्भ से ही विक्षिप्त थी।घर पर बस वो तोड़ फोड़ ही करती रहती थी।परमानिक उसे कॉके तक भी ले गया था. पर कोई खास फायदा नही हुआ।परमानिक उसका परित्याग कई वजहों से नही कर सकता था. जिसमे सबसे मूख्य कारण उसका धनाढय ससुराल था।कलकत्ता के मगह से चली नहर. जो धईया तक परमानिक के पास आती थी. उसमे पानी नही बल्कि टाका बहता था।

पॉच बच्चों के मॉ की जवानी ढलने को आई. पति की नौकरी भी न रही।परमानिक ने अपनी सरपरस्ती अचानक समेट ली।परिवार पर भूखों मरने की नौबत आ गई।

हमारा घर स्टाफ कॉलनी से जरा हटकर था।यही वजह रही कि हमारे बचपन के साथी रामधनी के बच्चे बने. जिसकी गेट के बाहर धईया मे चाय पकौड़े की दुकान थी।ठीक उसके पहले मुबारक नाम का दर्जी था. जो दिनभर लोगो के जंघिया और पैजामे सिला करता था या लोगो की पतलूने बड़ी छोटी किया करता था।सिलने के नाम पर इतना ही तक उसे आता भी था।वो गोविन्दपुर का रहने वाला था और धईया मे ही एक बनिये के पक्के मकान मे रहता था और उसकी रखवाली करता था।इस बनिये का उसकी पत्नी से अपना एक विशेष सम्वन्ध था।वो कोरन्गापट्टी की थी।बाद के दिनो मे मुझे पता लगा कि मुबारक अपनी पत्नी के जरिये विहार और यू पी के कामुकों के लिए कोरन्गापट्टी की लड़कियो का इन्तजाम अपने घर पर कर दिया करता था।उसे दलाली मिल जाती थी. मुढी व मॉड़ भात का जुगाड़ हो जाता था।

अपने घर के सामने हम रामधनी के बच्चो के साथ क्रिकेट फूटवॉल हॉकी व सतगोटिया इत्यादि खेला करते थे।इस छोटे से मैदान से लगी कई प्रान्तीय मेसे थीं।मैदान और मेसो के बीच एक लाल रंग की दीवार थी. जो एक जगह थोड़ी सी नीची थी।इसके दोनो तरफ मेसों के नौकर ईटे जमा कर रखे थे और वहीं से लॉघकर धईया आया जाया करते थे।हर दिन इसी रास्ते एक दस बारह वर्ष की लड़की एक डालडे के डिब्बे मे मेसों के जूठन अपने घर ले जाया करती थी।उसके साथ एक और लड़की भी होती थी जिसके हॉथो मे एक अल्यूमिनियम की टूटी पिचकी देगची होती थी।ये दोनो वहने थीं।डालडे के डिब्बे मे एक मोर्चे लगी तार का हैन्डल भी होता था।उनके डिब्बे व देगजी चावल दाल पापड़ रोटी नान मछली मुर्गी साम्भर दोसा इडली या फिर पता नही किन किन जूठनो से भरी होती थी. जिनकी मिश्रित दुर्गन्ध से हमे उबकाई सी आती थी।ये दोनो वेटियॉ डिगवाडीह वाले चौकीदार की थीं. जो अपनी इकट्ठी की गई जूठनो से पूरे परिवार का पेट पालती थीं।ये जूठन भी उन्हे मुफ्त मे न मिलते थे।इनकी एवज मे उन्हे मेसों के नौकरो की धर पकड़. चुम्मा चाटी खोदा खादी सहने पड़ते थे।

ये क्रम वर्षो तक चलता रहा।इस चौकीदार की सबसे बड़ी लड़की एक आम नाक नक्श की थी. पर उस पर भी जवानी गदराई।परमानिक जगा और अपनी जेबें ढीली कीं।परिवार मे मेसो के जूठन आने बन्द हो गए।चौकीदार की दूसरी वेटी ने जिद ठान लीः मॉ चलो! कहीं मेहनत मजदूरी करते है।कब तक हम दीदी के पैसो से जीते रहेंगे!कब तक परमानिक दा हमे पालेगा!

उसके गालों पर एकाध दाने निकल आए थे।जवानी की ओर उसके पॉव आहिस्ता आहिस्ता सरक रहे थे।छातियो की परिधियॉ बढती ही जा रही थीं।उसके धर पकड़ के किस्से भी मुझे जब तब सुनने को मिलते रहते थे।इनमे न सिर्फ अवारे बल्कि लेक्चरार क्लर्क कई बच्चो के बाप जैसे सरीखे लोग भी होते थे।उसकी जवानी ने न जाने कितने मस्तको का संतुलन रौंद रखा था!एक बार तो बाहर झाड़ियो के पीछे टट्टी करते वक्त ही उसे सी पी डब्ल्यू डी का गफ्फूर धर दबोचा।हो हल्ला हो गया. वो बच गई।जितने मुॅह. उतनी बातें।इस मवाली शहर मे ईश्वर को गरीब परिवारों मे पैदा हुई कन्याओं की चौकीदारी अपने हॉथों मे ही रखनी थी।

हमारी पहली दाई आरा जिले की थी. जहॉ की मेरी मॉ भी हैं।उसके काम छोड़ने के बाद मॉ ने चौकीदार की पत्नी और उसके बेटी को काम पर रख लिया।उसकी पत्नी को हम दाई कहते थे पर उसके वेटी को पुष्पा. जो उसका नाम भी था।मॉ वहनो की छोड़ी साड़ियॉ व सलवार कुर्त्ते भी उन्हे मिलने लगे।पुष्पा मेरी बहनो के सलवार कुर्त्ते मे कैम्पस मे एक क्रान्ति ही ला दी थी।स्टूडेंटो की सीटियॉ प्रखर होती जा रही थीं।पुष्पा की मॉ अभी भी हमारी दाई थी. पर पुष्पा ने काम पर आना बन्द कर दिया था।जब उसकी मॉ बीमार पड़ जाती थी तो उसे ही काम पर आना पड़ जाता था।देखते ही देखते वो साड़ी पहनने लगी थी।अब उसके गालो पर वो दाने भी न थे।

मॉ और बेटी दोनो हमारी मॉ की कही बातें समझ लेते थे. पर इन दोनो को हिन्दी विल्कुल ही नही आती थी।पुष्पा के माता पिता सियालदह के रहने वाले थे।ये बंगाली थे. पर खोट्टा भी विना किसी रूकावट के बोल लेते थे।पुष्पा की मॉ जब तब मॉ से बंगाली मे ही कुछ पूछने आती थी।पता नही हमारी मॉ उसका कहा समझती भीं थीं या नहीं. पर वो अपना सिर हिला कर उससे ये जरूर कहती थी कि सब ठीक है।हमलोग बहुत खुश हैं।पुष्पा कुछ बोलती ही नही थी।हममे से किसी ने कभीं उसकी आवाज सुनी भी नही थी।हममे से जो भी उसके सामने पड़ जाता था. अपना ऑचल अपने

हॉथों मे समेटे बस वो उन्हे जोड़ देती थी।
इसी वर्ष वर्षो के बाद इसी परिवार को मैने दुर्गापूजा के अवसर पर बड़े सजे धजे धईया गेट से होकर शहर की ओर जाते देखा।पुष्पा का बाप पान चुभलाते आगे आगे अपना सीना ताने अपना पैर झटकते चला जा रहा था।उसके पीछे पुष्पा की मॉ एक नीली जार्जेट की साड़ी पहने अपने पॉच बच्चों के संग बढी जा रही थी।सब सजे धजे थे।पुष्पा की चारो बहने अब साड़ी बॉधने लगी थीं।इनका भाई नूपुर भी एक स्ट्रेच्लान के बेलबॉट और शर्ट पहने मिथून चक्रवर्ती को फेल किये हुए था।अपने भाई बहनों मे सिर्फ पुष्पा ही थी.जो थोड़े भरे बदन की थी और दूसरों की अपेक्षा मे जरा सी सॉवली थी.पर वो इस परिवार की सबसे खूबसूरत लड़की थी।इस परिवार मे एक वही थी.जो अपनी नज़रें झुकाये चली जा रही थी।उसे अपनी सुन्दरता का न कोई आभास था और न कोई घमन्ड।
पुष्पा की उम्र अनुमानतः पन्द्रह वर्ष रही होगी।अपने जीवन मे सर्वप्रथम मैने अपने ईश्वर से परमानिक की मौत मॉगी।ये सरपरस्त पुष्पा के घर के बगल मे ही बसा एक काला नाग था.जो अपने नथूने उठाये फूफकार रहा था।उसे अपना सारा विष पुष्पा के बदन मे उतारना था।उससे पुष्पा को भला कौन बचाता!
दुर्गापूजा के अवसर पर इस वर्ष वो कुछ ज्यादे ही दयावान था।बहनो से लेकर मॉ तक को वो जार्जेट की साड़ियों से लिपटा रखा था।नकली जेवरों से वो उन्हे नख सिर आच्छादित कर रखा था।
पुष्पा अब अनछूई नही थी।परमानिक कुछ ज्यादे ही दयावान हो चला था।किससे किससे वो स्वयम को बचाती.जबकि घर के बगल मे ही एक काला नाग नथुने उठाए फूलाए बैठा हो।पुष्पा से छोटी दो बहने भी थीं।
अपने कॉलेज के अन्तिम दिनो मे मुझे पुष्पा के समवेत बलात्कार का पता लगा।दिन दहाड़े ओल्ड हॉस्टल के कुछ लड़के उसे खिड़की के रास्ते किसी एक कमरे मे खींच ले गए।कई दिनो तक वो उसे किसी एक कमरे मे बन्द रखे।इस बलात्कार को वो झेल न पाई और पागल हो गई।उसे अपनी सुध न रही.परन्तु कामुको से उसे मुक्ति न मिली।
वो सस्वर हुजी काना बेन काना गाती सड़को पर घूमती रहती थी और गर्भवती होती रहती थी।उसके दिमाग का संतुलन तो न रहा.पर उसकी जवानी पर भी पतझड़ न आया था।टट्टी पेशाबों से लिथड़ा ये सौन्दर्य अभी भी कोई गुजरा बसन्त न था।लोग अभी भी सिहर रहे थे.कॉप रहे थे और इस सॉवली तलैया मे डूबकी मारे जा रहे थे।
परमानिक पुष्पा की तीसरी बहन मे व्यस्त था।
उसकी बड़ी बहन नकली सस्ते जेवरों की एवज मे अपनी टॉगे पसार और समेट रही थी।धईया मे शायद ही कोई बचा हो जिसे उसने खुश न किया हो।वो जवानी मे ही बूढी हो चली थी।शायद वो बीमार भी थी।इन सारी बातो के बावजूद उसे होमगार्ड का एक रंगरूट और चोर ब्याहा।उसके कपड़े लत्ते तो सुधरे ही.नाक कान पर भी सस्ते नकली जेवर झूलने लटकने लगे।मॉग मे सिन्दूर आते ही उसकी नजरे झुकती चली गई।अब वो ब्याहता थी।
धईया से लेकर हीरापुर तक की सड़कें अविराम पुष्पा के सस्वर हुजी काना बेन काना से गूॅजती रहती थीं।ये स्वर तभी टूटता था.जब कोई भेड़िया शाम के धूॅधलके मे उसे किसी पुटुस की झाड़ के पीछे खींच ले जाता था।पुष्पा बोलती बहुत कम थी।ज्यादेतर वो भाषा के नाम पर अपनी ऑखें या गर्दन ही इस्तेमाल करती थी।हुजी काना बेन काना गाते जब मै उसे पहली बार सुना था.तब मुझे पता लगा कि उसकी आवाज बेहद मोटी थी और वो थोड़ा नाक से भी बोलती थी।
पता नही उसका हूजी काना बेन काना कितने वर्षो तक धनबाद की शामों मे लोगों को सुनने को मिला!धनबाद मे अन्धेरा क्या घहराया.वो एक खूॅखार भेंड़ियों का शहर बन जाता था।

प्रमोद कुमार सिंह